फैसला सुरक्षित

उच्च न्यायालय उत्तराखण्ड, नैनीताल

प्रथम अपील संख्या 25 वर्ष 2008

मधुबाला और अन्य

..... अपीलार्थी।

बनाम्

श्रीमती पुष्पा देवी और अन्य

..... उत्तरदाता।

उपस्थितः

श्री सिद्धार्थ सिंह, अपीलार्थी की ओर से अधिवक्ता।

श्री जितेंद्र चौधरी, उत्तरदातायों की ओर से अधिवक्ता।

कोरमः

माननीय बी.सी. कांडपाल, ज0

माननीय निर्मल यादव, ज0।

(निर्मल यादव, ज0)

वर्तमान अपील श्रीमती मधुबाला और उनके पुत्र ललित मोहन द्वारा प्रधान न्यायाधीश, परिवार न्यायालय, देहरादून द्वारा पारित निर्णय और डिक्री दिनांकित–17.03.2018 के विरुद्ध योजित की गई, जो श्रीमती पुष्पा देवी, जो भी गणेश चन्द्र की पत्नी हैं, के द्वारा दायर किया गया और डिक्री हुआ।

संक्षेप में तथ्य इस प्रकार है कि मधुबाला और गणेश चंद्र के बीच विवाह दिनांक–19.11.1976 को सम्पन्न हुआ था। तत्पश्चात् गणेश चंद्र ने याचिका संख्या 324 वर्ष 1981 के माध्यम से अपने विवाह को भंग करने के लिए विवाह विच्छेद की डिक्री चाही। उक्त याचिका में दिनांक– 23.03.1982 को एकपक्षीय डिक्री पारित की गई। तत्पश्चात्, गणेश चंद्र ने उत्तरदाता संख्या–1 पुष्पा देवी से विवाह किया। यह विवाह पुष्पा देवी के गांव में हिंदू रीति–रिवाजों से एक सादे समारोह में सम्पन्न किया गया, और इसे दिनांक–02.07.1982 को रजिस्ट्रार, विवाह, देहरादून के समक्ष पंजीकृत किया गया था। ऐसा कहा जाता है कि गणेश चंद्र और पुष्पा देवी के मध्य संबंध कुछ समय के लिए सामान्य और सुखद थे, लेकिन कुछ समय पश्चात् मधुबाला ने भी गणेश चंद्र के साथ वैवाहिक घर में रहना प्रारम्भ कर दिया। जिस कारण, पुष्पा देवी के प्रति गणेश चंद्र का व्यवहार पूरी तरह से बदल गया। उसने पुष्पा देवी के साथ क्रूरता से व्यवहार का व्यवहार किया और उसकी उपेक्षा की। उसने उसे ससुराल से दूर करने की कोशिश की लेकिन उसके पिता के हस्तक्षेप पर उसे वहां रहने दिया गया। तत्पश्चात् गणेश चंद्र ने जिला न्यायाधीश, देहरादून के न्यायालय में वाद संख्या–11 वर्ष 1987 गणेश चन्द्र बनाम् पुष्पा देवी उनके और पुष्पा देवी के बीच विवाह को रद्द करने के लिए इस आधार पर

दायर किया कि जब उसका विवाह पुष्पा देवी के साथ संपन्न हुआ था, उस समय मधुबाला के साथ विवाह विद्यमान था।

पुष्पा देवी के अनुसार, उसे कभी भी उपरोक्त मुकदमें की अर्न्तवस्तु के बारे में सूचित नहीं किया गया था, हालांकि, उसी की एक प्रति उन्हें मिली थी, जिसे उसने अपने ससुर को सौंप दी थी। उसे अपने ससुर पर पूरा भरोसा था। उसका मानना था कि उसके ससुर उसके शुभचिंतक हैं क्योंकि उन्होंने अदालत में मामले को आगे बढ़ाने के लिए श्री डी0 पी0 बिजल्वान, अधिवक्ता को नियुक्त किया। उक्त अधिवक्ता ने वकालतनामे पर उसके हस्ताक्षर करवाए। उसे उसके अधिवक्ता द्वारा सूचित किया गया कि गणेश चंद्र ने इस आधार पर मुकदमा दायर किया था कि वह पहले से ही मधुबाला के साथ विवाहित था और मधुबाला के साथ उसका विवाह अभी भी वैध था, जब उसने पुष्पा देवी से शादी की थी, इसलिए, पुष्पा देवी के साथ उसकी शादी को शून्य व अमान्य घोषित किया जाए। गणेश चंद्र के साथ–साथ परिवार के सभी सदस्यों ने पुष्पा देवी को विश्वास दिलाया कि वह गणेश चंद्र की दूसरी पत्नी थी और उसका विवाह शून्य था, क्योंकि गणेश चंद्र से शादी होने पर उनकी पहली शादी विद्यमान थी। दिनांक–16.10.1990 को पुष्पा देवी को न्यायालय से एक पंजीकृत नोटिस प्राप्त हुआ, जिसके बाद उन्होंने अपने अधिवक्ता श्री डी0 पी0 बिजल्वाण से परामर्श लिया, जिन्होंने उसे बताया कि नोटिस गणेश चंद्र के घर से बेदखल होने के संबंध में था। उन्होंने उसे यह भी बताया कि उसे उनसे सभी कागजात ले लेने चाहिए और किसी अन्य अधिवक्ता से परामर्श करना चाहिए क्योंकि मामले में कई जटिलताएं हैं। इसलिए, दिनांक–07.09.1991 को उसने अधिवक्ता श्री डी0 पी0 बिजल्वाण से समस्त कागजात प्राप्त किये और कुछ अन्य अधिवक्ताओं श्री नरेश सक्सेना और श्री जितेंद्र कुमार से परामर्श किया। उन्होंने वाद संख्या 11 वर्ष 1987 के रिकॉर्ड का निरीक्षण किया और पाया कि गणेश चंद्र के साथ उसके विवाह को डिक्री दिनांकित–05.07.1988 के द्वारा शून्य व निष्प्रभावी घोषित कर दिया गया था। निरीक्षण के दौरान उसके अधिवक्ताओं ने यह भी पाया कि गणेश चंद्र ने याचिका संख्या 324 वर्ष 1981 में दिनांक–23.03.1982 को विवाह विच्छेद की डिक्री प्राप्त की थी, जिसके द्वारा गणेश चंद्र और मधुबाला के बीच सम्पन्न विवाह को भंग कर दिया गया था। उक्त डिक्री की प्रमाणित प्रति उसके अधिवक्ताओं द्वारा दिनांक–16.09.1991 को प्राप्त की गई थी। केवल उस समय, पुष्पा देवी को ज्ञात हुआ कि गणेश चंद्र के साथ उसका विवाह कानूनी और वैध था, क्योंकि गणेश चंद्र और मधुबाला के बीच विवाह विच्छेद होने के बाद ऐसा किया गया था। उसे यह भी ज्ञात हुआ कि गणेश चंद्र ने वाद संख्या 11 वर्ष 1987 में किये गये अपने अभिवचनों में उक्त तथ्य का खुलासा नहीं किया था। इस प्रकार, उसने इस तथ्य को छिपाकर न्यायालय के साथ धोखाधड़ी की कि मधुबाला के साथ उसका विवाह उसके और पुष्पा देवी के बीच विवाह के समय अस्तित्व में नहीं था।

सही तथ्यों की जानकारी प्राप्त करने के पश्चात् उत्तरदाता पुष्पा देवी ने दिनांक 05.07.1988 की डिक्री को शून्य व निष्प्रभावी घोषित किये जाने हेतु दिनांक–14.10.1991 को वर्तमान वाद दायर किया। वाद के लंबित रहने के दौरान दिनांक–18.10.1995 को गणेश चंद्र की मृत्यु हो गई। गणेश चंद्र की मृत्यु के पश्चात् वाद में संशोधन किया गया। पुष्पा देवी ने गणेश चंद्र के सभी कानूनी उत्तराधिकारियों को वाद में पक्षकार बनाया। हालांकि, गणेश चंद्र की मां राजेश्वरी देवी का भी निधन दिनांक–27.07.1998 को हो चुका था। प्रारम्भिक स्तर पर मुकदमे को गणेश चंद्र ने लड़ा, जिसमें उसने स्वीकार किया कि पुष्पा देवी पौड़ी गढ़वाल की रहने वाली हैं। उसने यह भी स्वीकार किया कि उन्होंने वाद संख्या 11 वर्ष 1987 दायर किया था, जो डिक्री हुआ था, उसने यह भी कथन किया कि उक्त वाद का नोटिस पुष्पा देवी को विधिवत तामिल कराया गया था, परन्तु उसने उक्त मुकदमे में पैरवी नहीं की, जबकि उसे मामले के सभी तथ्यों की पूरी जानकारी थी। हालांकि, उसने इस बात से इन्कार नहीं किया कि उसने वाद संख्या–11 वर्ष 1987 की अभिवचनों में मधुबाला के साथ अपने विवाह विच्छेद के संबंध में उल्लेख नहीं किया था।

अपीलार्थी मधुबाला ने प्रतिवाद पत्र दाखिल किया था, जिसमें उसने स्वीकार किया कि गणेश चंद्र के साथ उसका विवाह दिनांक–23.03.1982 के एकपक्षीय डिक्री द्वारा भंग कर दिया गया था, लेकिन उक्त डिक्री को अपील में निरस्त कर दिया गया, इस प्रकार वह गणेश चंद्र की कानूनी रूप से विवाहिता पत्नी है। यह भी स्वीकार किया गया है कि गणेश चंद्र द्वारा दायर मुकदमे में यह उल्लेख किया गया है कि उनकी पहली पत्नी अभी भी जीवित थी, हालांकि, वादी पुष्पा देवी ने वाद में पैरवी नहीं की और इसे एकपक्षीय डिक्री किया गया। उसने यह भी कथन किया है कि पुष्पा देवी ने श्री डी0 पी0 बिजल्वान के खिलाफ इस आधार पर कोई मामला दर्ज नहीं किया कि उसने धोखाधड़ी की है या उसे (पुष्पा देवी) को अंधेरे में रखा।

पक्षकारों के अभिवचनों के आधार पर न्यायालय द्वारा निम्नलिखित विवाद्यक विरचित किये गये:

i. क्या वाद संख्या 11 वर्ष 1987 (गणेश बनाम पुष्पा देवी) में पारित डिक्री दिनांक 05.07.1988 धोखे से प्राप्त की गई थी, यदि हां, तो यह प्रभाव?

ii. क्या वाद का मूल्याकंन कम किया गया और उचित न्यायालय शुल्क अदा नहीं किया गया?

iii. क्या वाद परिसीमा से बाधित है?

iv. क्या इस न्यायालय को वाद की सुनवाई का क्षेत्राधिकार प्राप्त नहीं है?

v. अनुतोष।

अपने वाद को साबित करने के लिए, पुष्पा देवी स्वयं पी0डब्लू–1 के रूप में परीक्षित हुई और कुछ दस्तावेज प्रस्तुत किए। दूसरी ओर, मधुबाला डी0डब्लू–1 के रूप में परीक्षित हुई

जिन्होंने यह साबित करने के लिए कुछ फोटोग्राफ और दस्तावेज दाखिल किए कि वह गणेश चंद्र की विधि विवाहिता पत्नी है।

विचारण कोर्ट ने मामले के तथ्यों और परिस्थितियों और पत्रावली पर उपलब्ध साक्ष्य के दृष्टिगत, वादी/उत्तरदाता संख्या–1 के पक्ष में सभी विवाद्यक निस्तारित किये और वाद को डिक्री किया। वाद को डिक्री किये जाते समय विचारण न्यायालय द्वारा यह अवधारित किया गया कि गणेश चंद्रा ने सिविल वाद संख्या–11 वर्ष 1987 में डिक्री दिनांकित–05.07.1988 को न्यायालय से सही तथ्यों को छिपाकर प्राप्त किया।

चूंकि अपीलार्थी/उत्तरदाता मधुबाला और उनके बेटे ललित मोहन ने डिक्री को चुनौती दी है। फैसले को दो तरफा चुनौती दी गई है। अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता का प्रथम तर्क यह है कि विचारण न्यायालय अर्थात् परिवार न्यायालय के पास किसी अन्य वाद में पारित डिक्री को निरस्त करने का कोई क्षेत्राधिकार नहीं है। परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 7 के प्रावधान का उल्लेख करते हुये यह तर्क दिया गया कि यह विवाह की अकृतता या वैवाहिक सम्बन्धों की प्रत्यास्थापना या न्यायिक पृथक्करण या विवाह–विच्छेद के डिक्री के लिए मुकदमा नहीं है, और, न ही यह विवाह की वैधता की घोषणा या परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा–7 के स्पष्टीकरण के उपखण्ड 'ए' से 'जी' में उल्लिखित किसी अन्य कार्यवाही के लिए मुकदमा है।

अपीलार्थियों के अधिवक्ता की दलील पूरी तरह से गलत हैं। स्वीकृत रूप से वाद संख्या 11 वर्ष 1987 सिविल जज, देहरादून के न्यायालय के समक्ष योजित किया गया था, लेकिन देहरादून में परिवार न्यायालय की स्थापना के बाद इसे परिवार न्यायालय में स्थानांतरित कर दिया गया। परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 7 के अन्तर्गत परिवार न्यायालय का क्षेत्राधिकार निर्दिष्ट किया गया है। परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984 की धारा 7 निम्नलिखित है : –

> **7. अधिकारिता–** (1) इस अधिनियम के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए–
>
> (क) कुटुम्ब न्यायालय को, स्पष्टीकरण में निर्दिष्ट प्रकृति के वादों और कार्यवाहियों की बाबत, तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन किसी जिला न्यायालय या किसी अधीनस्थ सिविल न्यायालय द्वारा प्रयोक्तव्य पूर्ण अधिकारिता होगी और वह उसका प्रयोग करेगाः
>
> (ख) कुटुम्ब न्यायालय के बारे में, ऐसी विधि के अधीन ऐसी अधिकारिता का प्रयोग करने के प्रयोजनों के लिए, यह समझा जाएगा कि वह ऐसे क्षेत्र के लिए, जिस पर कुटुम्ब न्यायालय की अधिकारिता का विस्तार है, यथास्थिति, जिला न्यायालय या अधीनस्थ सिविल न्यायालय है।
>
> **स्पष्टीकरण–**यह उपधारा में निर्दिष्ट वाद और कार्यवाहियां निम्नलिखित प्रकृति के वाद और कार्यवाहियां है, अर्थात्:–

(क) किसी विवाह के पक्षकारों के बीच (विवाह को, यथास्थिति, अकृत और शून्य घोषित करने के लिए या विवाह को बातिल करने के लिए) विवाह की अकृतता या दाम्पत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन या न्यायिक पृथक्करण या विवाह के विघटन की डिक्री के लिए कोई वाद या कार्यवाहीः

(ख) किसी व्यक्ति के विवाह की विधिमान्यता के बारे में या उसकी वैवाहिक प्रास्थिति के बारे में घोषणा के लिए कोई वाद या कार्यवाहीः

(ग) किसी विवाह के पक्षकारों के बीच ऐसे पक्षकारों की या उनमें से किसी की सम्पत्ति की बाबत कोई विवाद या कार्यवाहीः

(घ) किसी वैवाहिक संबंध में उत्पन्न परिस्थितियों में किसी आदेश या व्यादेश के लिए कोई वाद या कार्यवाहीः

(ड.) किसी व्यक्ति के धर्मजत्व के बारे में किसी घोषणा के लिए कोई वाद या कार्यवाहीः

(च) भरण–पोषण के लिए कोई वाद या कार्यवाहीः

(छ) किसी व्यक्ति की संरक्षकता अथवा किसी अवयस्क की अभिरक्षा या उस तक पहुंच के संबंध में कोई वाद या कार्यवाहीः

(2) इस अधिनियम के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए, किसी कुटुम्ब न्यायालय को–

(क) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के अध्याय 9 के अधीन (जो पत्नी, संतान और माता–पिता के भरणपोषण के लिए आदेश के संबंध में है) किसी प्रथम वर्ग मजिस्ट्रेट द्वारा प्रयोक्तव्य अधिकारिता; और

(ख) ऐसी अन्य अधिकारिता, जो किसी अन्य अधिनियमिति द्वारा उसको प्रदत्त की जाए, होगी और वह उसका प्रयोग करेगा।

अधिनियम की धारा 7 की उपधारा (1) के उपखंड (क) में यह प्रावधानित है कि कुटुम्ब न्यायालय, स्पष्टीकरण में निर्दिष्ट प्रकृति के वादों और कार्यवाहियों के बाबत् तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन किसी जिला न्यायालय या किसी अधीनस्थ सिविल न्यायालय द्वारा प्रयोक्तव्य पूर्ण अधिकारिता होगी और वह उसका प्रयोग करेगा। स्पष्टीकरण के खंड (क) में प्रावधानित है कि विवाह की अकृतता की डिक्री के लिए विवाह के पक्षकारों के बीच कोई वाद या कार्यवाही। स्पष्टीकरण के खंड (ख) में प्रावधानित है कि विवाह की विधिमान्यता या किसी व्यक्ति की वैवाहिक प्रास्थिति के बारे में घोषणा के लिये कोई वाद या कार्यवाही।

उपर्युक्त प्रावधानों के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि कुटुम्ब न्यायालय विवाह की अकृतता की डिक्री के लिए विवाह के पक्षकारों के बीच वाद या कार्यवाही में अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर सकता है और विवाह की विधिमान्यता या किसी व्यक्ति की वैवाहिक प्रास्थिति के बारे में घोषणा के लिए वाद या कार्यवाही में भी कर सकता है।

वर्तमान मामले में वादी पुष्पा देवी ने एकपक्षीय डिक्री को अपास्त करने के लिये अपनी वैवाहिक प्रास्थिति घोषित करने के लिए वाद दायर किया, जिसे गणेश चंद्र ने न्यायालय के साथ–साथ उन पर भी धोखाधड़ी करके प्राप्त किया था। परिवार न्यायालय अधिनियम, 1984 की उपधारा (1) धारा 7 के स्पष्टीकरण के खंड (क) और (ख) स्पष्ट रूप से ऐसे मामलों में कुटुम्ब न्यायालयों को क्षेत्राधिकार प्रदान करते हैं।

अपीलार्थियों के अधिवक्ता का दूसरा तर्क परिसीमा से सम्बन्धित है। अपीलार्थियों के अधिवक्ता ने तर्क दिया कि वादी ने अपने अभिवचनों में कथन किया है कि वाद में नोटिस उसे दिनांक–27.07.1987 को तामिल कराया गया था और उसने अधिवक्ता को भी नियुक्त किया था। इस प्रकार, उसे उक्त तिथि से पर्याप्त जानकारी थी कि गणेश चंद्र ने इस आधार पर विवाह विच्छेद के लिए वाद दायर किया था कि मधुबाला के साथ उसका विवाह पुष्पा देवी के साथ उसके विवाह के समय भी जीवित था।

उन्होंने आगे तर्क दिया कि वादी पुष्पा देवी का यह अभिकथन कि उसने अपने ससुर को मामला लड़ने के लिए अधिकृत किया था, स्वीकार नहीं किया जा सकता क्योंकि पत्रावली पर ऐसा कोई प्राधिकार पत्र नहीं है। उन्होंने स्वयं श्री डी0 पी0 बिजल्वान के पक्ष में वकालतनामा पर हस्ताक्षर किए थे। यहां तक कि अपने अभिवचनों में भी उन्होंने स्पष्ट रूप से कथन किया है कि उस लगता था कि गणेश चंद्र के साथ उनके (पुष्पा देवी) विवाह के समय उनके पति और मधुबाला का विवाह विद्यमान था, इसलिए, उन्होंने मुकदमे में पैरवी नहीं की।

अपीलार्थियों के अधिवक्ता द्वारा यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया है कि भले ही कोई आदेश या डिक्री शून्य या निष्प्रभावी हो, लेकिन उसे परिसीमा अधिनियम के तहत प्रदान की गई परिसीमा अवधि के भीतर उचित कार्यवाही दायर करके निरस्त करना होगा। अपने तर्क के समर्थन में, उन्होंने **एम0 मिनाक्षी और अन्य बनाम् मेटाडिन अग्रवाल और अन्य 2006 (7) एससीसी 470** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को संदर्भित किया। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि वादी पुष्पा देवी को समय के भीतर अर्थात् जानकारी होने की तिथि से तीन वर्ष के अन्दर उक्त डिक्री को चुनौती देनी चाहिए थी। उन्होंने बताया कि डिक्री दिनांक–05.07.1988 को पारित की गई थी, जबकि उन्हें (पुष्पा देवी) को नोटिस दिनांक–27. 07.1987 को तामिल कराया गया था, जो स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि उन्हें माह जुलाई, 1987 में वाद दायर होने की जानकारी हो गई थी, लेकिन उन्होंने मुकदमे में पैरवी नहीं की, उन्होंने दिनांक 05.07.1988 को डिक्री को अपास्त करने के लिये दिनांक–15.10.1991 को वर्तमान वाद दायर किया। इस प्रकार, मुकदमा निराशाजनक रूप से परिसीमा अर्थात् जानकारी होने की तिथि से 3 वर्ष से अधिक होने के कारण बाधित है।

अपीलार्थियों के अधिवक्ता द्वारा पुष्पा देवी द्वारा न्यायालय के समक्ष दिए गए बयान का हवाला दिया, जिसमें उन्होंने कहीं भी यह नहीं कहा है कि उनके ससुर ने किसी भी तरह से उनके साथ धोखाधड़ी की है। उसने बस इतना कथन किया है कि सद्भावना से उसने अपने

ससुर को कागजात सौंपे थे। यद्यपि अभिवचनों से दर्शित होता है कि उसने स्वयं अधिवक्ता से संपर्क स्थापित किया और वकालतनामा पर हस्ताक्षर किए और इस प्रकार, परिसीमा अवधि उसकी जानकारी की तिथि से अर्थात् दिनांक–27.07.1987 से प्रारम्भ होगी।

दूसरी ओर, वादी उत्तरदाता के अधिवक्ता ने तर्क दिया कि वादी ने स्पष्ट रूप से कहा है कि उसे गणेश चंद्र और परिवार के सभी सदस्यों द्वारा विश्वास दिलाया गया था कि मधुबाला गणेश चंद्र की पहली पत्नी थी और उनकी शादी अभी भी विद्यमान थी। उसे दिनांक–23.03.1982 को विवाह विच्छेद की डिक्री के बारे में कोई जानकारी नहीं थी, जिससे गणेश चंद्र और मधुबाला का विवाह भंग हो गया। उसे उक्त डिक्री के बारे में तब पता चला, जब उसने अपने अधिवक्ताओं श्री नरेश सक्सेना और श्री जितेंद्र कुमार से संपर्क स्थापित किया, जिन्होंने पूरी पत्रावली का निरीक्षण किया और उसे बताया कि डिक्री दिनांक–23.03. 1982 के द्वारा गणेश चंद्र और मधुबाला के बीच विवाह पहले ही भंग हो चुका है।

पत्रावली पर दाखिल तथ्यों से यह अच्छी तरह से साबित होता है कि गणेश चंद्र ने न्यायालय के साथ–साथ पुष्पा देवी के साथ भी धोखाधड़ी की थी। उन्होंने वाद संख्या 11 वर्ष 1977 के अभिवचनों में इस बात का कोई उल्लेख नहीं किया कि मधुबाला के साथ उनका विवाह पहले ही भंग हो चुका था, जब उन्होंने पुष्पा देवी से शादी की थी। उसने न्यायालय से इस तथ्य को छिपाकर डिक्री प्राप्त की। यदि यह तथ्य न्यायालय के संज्ञान में आया होता तो डिक्री दिनांक 05.07.1988 कभी पारित नहीं की जाती। यह सुस्थापित सिद्धांत है कि न्यायालय के साथ धोखाधड़ी करके प्राप्त कोई भी निर्णय या डिक्री कानून की नजर में शून्य और गैर–मान्य (non-est) है। न्यायालय द्वारा पारित ऐसी सभी डिक्रियों को प्रत्येक न्यायालय द्वारा, चाहे वह प्रवर हो या अवर, शून्य माना जाना चाहिए।

एस0 पी0 चेंगलवराया नायडू बनाम जगन्नाथ ए0आई0आर0 1994 सुप्रीम कोर्ट 853 के वाद में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह अवधारित किया गया हैः

> *"The courts of law are meant for imparting justice between the parties. One who comes to the court must come with clean hands. It can be said without hesitation that a person whose case is based on falsehood has no right to approach the court. He can be summarily thrown out at any stage of the litigation. A litigant, who approaches the court, is bound to produce all the documents executed by him which are relevant to the litigation. If he withholds a vital document in order gain advantage on the other side then he would b*e guilty of playing fraud on the court as well as on the opposite party."

वर्तमान मामले के तथ्य किसी भी तरह से कोई संदेह उत्पन्न नहीं करते हैं कि गणेश चंद्रा ने न्यायालय और उत्तरदाता पुष्पा देवी के साथ धोखाधड़ी करके दिनांक–05.07.1988 की डिक्री प्राप्त की। किसी दूसरे का अनुचित लाभ उठाकर कुछ हासिल करने के इरादे से जानबूझकर धोखा देने का ऐसा कार्य धोखाधड़ी है। दिनांक–23.03.1982 की एकपक्षीय डिक्री, जिसके द्वारा गणेश चंद्रा और मधुबाला के विवाह को सिविल न्यायालय के समक्ष भंग कर

दिया गया था, का प्रस्तुत न करना और यहां तक कि उल्लेख न करना न्यायालय के साथ–साथ दूसरे पक्ष के साथ धोखाधड़ी करने के समान है। जैसा कि गणेश चंद्र ने लाभ प्राप्त करने के लिए महत्वपूर्ण दस्तावेजों को रोक दिया था, हमारा विचार है कि गणेश चंद्रा द्वारा न्ययालय में धोखाधड़ी करके प्राप्त की गई डिक्री कानून की नजर में शून्य और गैर–मान्य (non-est) है।

परिसीमा के संबंध में हमारा विचार है कि वादी उत्तरदाता पुष्पा देवी ने दिनांक–23.03.1982 की तलाक की डिक्री के बारे में जानकारी प्राप्त की, जिसके द्वारा गणेश चंद्र ने अपनी पहली पत्नी मधुबाला से दिनांक–06.09.1991 को तलाक प्राप्त किया था, जब उक्त डिक्री की प्रमाणित प्रति उसके अधिवक्ताओं द्वारा न्यायालय से प्राप्त की गई थी। श्री डी0 पी0 बिजल्वान ने दिनांक–07.09.1991 को उसे समस्त कागजात सौंप दिए थे और मामले में जटिलतायें होने के कारण किसी अन्य अधिवक्ता से परामर्श करने के लिए कहा था। इसके बाद, उसने अधिवक्ता श्री नरेश सक्सेना और श्री जितेंद्र कुमार से परामर्श किया, जिन्होंने वाद संख्या 11 वर्ष 1987 के रिकॉर्ड का निरीक्षण किया। जब आगे की कार्यवाही की गई, तो उसके अधिवक्ताओं ने डिक्री दिनांक 23.03.1982 की प्रमाणित प्रति प्राप्त की। यह पत्रावली में आया है कि पुष्पा देवी ज्यादा शिक्षित नहीं है। उसके अनुसार, वह मात्र थोड़ी सी हिंदी पढ़ और लिख सकती थी। इन परिस्थितियों में, यह नहीं माना जा सकता है कि उसने गणेश चन्द्र द्वारा दायर सिविल वाद संख्या–11 वर्ष 1987 में नोटिस तामिल होने के पश्चात् सभी तथ्यों का ज्ञान प्राप्त कर लिया था। उसने स्पष्ट रूप से कथन किया है कि उसने अपने ससुर को यह मानते हुए सभी कागजात सौंप दिए कि वह उसके शुभचिंतक थे, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि उसके ससुर ने उसे सभी तथ्यों का खुलासा नहीं किया। अंततः, उसने माह सितंबर, 1991 में अपने अधिवक्ताओं श्री नरेश सक्सेना और श्री जितेंद्र कुमार के माध्यम से तथ्यों के बारे में ज्ञान प्राप्त किया। जिसके पश्चात्, उसने परिसीमा अवधि अर्थात् दिनांक–14.10.1991 को वाद दायर किया।

तदनुसार, हमें आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप करने का कोई आधार प्रतीत नहीं होता है। हम निचले न्यायालय के निष्कर्षों को बरकरार रखते हैं। चुनौती के अधीननिर्णय और डिक्री दिनांकित–17.03.2008 की पुष्टि की जाती है। अपील खारिज की जाती है।

(निर्मल यादव, ज0) **(बीसी कांडपाल, ज0)**

30.03.2010